पढ़कर, पढ़ना सीखना लिखकर, लिखना सीखना

– अनुपमा तिवाड़ी

कहानी और कविताओं की परिवेश से जुड़ी पुस्तकों और गतिविधियों का इस्तेमाल करने से बच्चे पढ़ने के प्रति सहज होते हैं और पढ़ना भी तेजी से सीखते हैं।

अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन राजकीय विद्यालयों में शिक्षकों के साथ मिलकर बच्चों की शिक्षा की बेहतरी के लिए कार्य करता है। इसी सिलसिले में हमारा समय–समय पर राजकीय विद्यालयों में जाना होता है। विद्यालय की कक्षाओं में शिक्षक को आने वाली कठिनाइयों पर, अकादमिक सहयोग करना होता है। कहीं–कहीं इन स्कूलों में कक्षा पांच तक के बच्चे पढ़ने और लिखने में दिक्कत महसूस करते हैं। ऐसे में हमारी शिक्षक/शिक्षिकाओं से पाठ्यपुस्तकों से इतर अनेक प्रकार की गतिविधियों और शिक्षण सामग्री को उपयोग में लेने को लेकर बातचीत होती रहती है। इनमें पुस्तकालय से बड़े–बड़े चित्रों वाली, छोटी–छोटी कहानियों, कविताओं की पुस्तकों से बच्चों को कहानियां सुनाने की जब बात होती है तो कई शिक्षक/शिक्षिकाओं का कहना होता है "बच्चों को कहानियां सुनना तो अच्छा लगता है लेकिन हर बार कहानियां ही तो नहीं सुना सकते न! आखिर हमें कोर्स भी तो पूरा करवाना पड़ता है। अधिकारी तो हमसे कोर्स पूरा करने के बारे में पूछेंगे"। इस तरह शिक्षक साल दर साल कोर्स पूरा करवाते जाते हैं। शिक्षक/शिक्षिकाएं कई बार बच्चों को सीमित और बेहद अनुशासित तरीकों से सिखाने पर इतना अधिक जोर देते हैं कि उनका सीखना और ज्यादा दुरूह हो जाता है। कई बार कक्षा पांच तक भी कुछ बच्चे हिंदी में पढ़ने और लिखने की दक्षता हासिल नहीं कर पाते हैं। ऐसे में पांच वर्ष तक कोर्स पूरा करना भी बेमानी – सा होकर रह जाता है। ऐसे समय में शिक्षक/शिक्षिकाओं के लिए बच्चों को पढ़ना– लिखना–सिखाना और बच्चों के लिए पढ़ना– लिखना–सीखना बहुत बड़ी चुनौती के रूप में सामने खड़ा होता है. जब बच्चों को पढ़ना और लिखना नहीं आता तो वे अन्य विषयों में भी ठीक प्रकार से काम नहीं कर पाते हैं।

पुस्तकालय की बड़े–बड़े चित्रों वाली, चित्रों के साथ में एक–एक पंक्ति और फिर दो–तीन पंक्तियों वाली पुस्तकें बच्चों को चित्र के माध्यम से अनुमान लगाकर पढ़ना सीखने में मदद करती हैं। कई बार शिक्षक/शिक्षिका यह भी कहते हुए सुने जाते हैं कि बच्चे तो एक अक्षर भी पढ़ना नहीं जानते हैं तो कहानी या कविताओं की पुस्तकें कैसे पढ़ेंगे? उनका सवाल एक नजर से जायज मालूम पड़ता है लेकिन यहां यह समझने की जरूरत है कि जब पढ़ना आ जायेगा तब इन छोटी–छोटी पुस्तकों को पढ़ेंगे या इन्हें पढ़ेंगे तो पढ़ना आ जाएगा। कहानी और कविताओं की परिवेश से जुड़ी पुस्तकों और गतिविधियों

का इस्तेमाल करने से बच्चे पढ़ने के प्रति सहज होते हैं और पढ़ना भी तेजी से सीखते हैं। हालाँकि पहले पहल जब वे यह जानते हैं कि चित्र के साथ क्या पंक्ति लिखी है तब वे बोले गए शब्द के साथ–साथ ही नहीं चलते हैं। कई बार वे पूरी पंक्ति एक साथ बोल जाते हैं लेकिन जब वे शिक्षिका को एक–एक शब्द पर अंगुली रखकर बोलते हुए और फिर क्रमश उसका उच्चारण करते हुए देखते हैं तो वे यह समझने लगते हैं कि प्रत्येक शब्द के लिए अलग–अलग उच्चारण किया जा रहा है। वे यह भी जान रहे होते हैं कि हिंदी भाषा में बाएं से दाईं और पढ़ा जाता है और पंक्ति पूरी हो जाने के बाद उसके नीचे लिखी पंक्ति पढ़ी जाती है यानी पहले ऊपर वाली पंक्ति फिर उसके नीचे वाली।

पढ़ना–लिखना, सुनने – बोलने जितना ही सहज

पढ़ना और लिखना सीखने की प्रक्रिया उतनी ही सरल और सहज है जितनी कि सुनने और बोलने की। बच्चा अपनी चार–पांच महीने की आयु से ही अपने सामने विभिन्न वस्तुओं के नाम और परिवार और बाहर के व्यक्तियों के द्वारा बहुत सारा संवाद/वार्तालाप करते हुए लगातार देखता और सुनता रहता है। इस दौरान हम बच्चे को उन चीजों के नाम और वाक्य/संवाद बोलने के लिए भी लगातार प्रेरित करते रहते हैं। शुरुआत में बच्चा कुछ टूटे–टूटे शब्दों के द्वारा पूरे शब्द को बोलने का प्रयास करता है और हम उसके टूटे–टूटे शब्दों के संकेत भर को स्वीकार करते हुए उसे आवश्यक चीजें उपलब्ध करवाते हैं। जैसे वह दूध को यदि 'दुद' या 'दूदू' या 'दू दू दू' बोलता है तब भी हम यह नहीं कहते कि वह दूध को गलत बोल रहा है। वह पूरे शब्द को सही बोलेगा हम तभी उसे समझेंगे. हमारे कान सदैव उसके संकेत भर को सुनने/समझने के लिए आतुर रहते हैं। यहां हम समय की कोई सीमा भी नहीं बाँधकर चलते हैं कि उसे, जीवन में काम आने वाले रोजमर्रा के इन शब्दों को, इतने समय में तो सीख ही लेना चाहिए। यहाँ हम उसे बोल–बोल कर सीखने की, गलतियाँ कर – कर के सही बोलने की समय सीमा में भी काफी छूट देते चलते हैं। हालाँकि जब कोई बच्चा दो–ढाई साल तक भी नहीं बोल पाता या कम–कम बोलता है तो अभिभावक थोड़े चिंतित होते हैं। फिर भी हम बड़ी ही सहजता से यह स्वीकार करते चलते हैं कि कोई बच्चा जल्दी बोलने/समझने लगता है और कोई थोड़ी देर से।

लेकिन स्कूल में पढ़ने और लिखने की जब बात आती है तो हम एक निश्चित समय में (कक्षा 1 व 2 में), सीमित सीखने के संसाधनों (सिर्फ पाठयपुस्तक) के माध्यम से यह अपेक्षा करने लगते हैं कि बच्चे को सही–सही पढ़ना और लिखना आ जाना चाहिए। जहां हम बच्चे को मौखिक भाषा को सीखने में काफी छूट देते हैं वहीँ पढ़ने और लिखने (लिखित सामग्री के प्रयोग) को ले कर हमारा रवैया सख्त क्यों होता है ?

कक्षा में की जाने वाली कुछ गतिविधियां

मैंने लगभग 31 वर्ष पहले बच्चों के साथ जयपुर शहर की एक कच्ची बस्ती के एक वैकल्पिक विद्यालय में शिक्षिका के रूप में कार्य करना आरम्भ किया था। जिन बच्चों के साथ मुझे काम करना था। उन्हें पढ़ना–लिखना सिखाने के लिए मैं अनेक प्रकार की गतिविधियां करती थी जिनका मैं यहां जिक्र कर रही हूं। शुरूआती एक–दो दिन मैंने बच्चों को कागज पर चित्र बनाने के कागज और मोम के रंग दिए (लगभग सभी बच्चों को चित्र बनाना, उनमें रंग भरना अच्छा लगता है)। बच्चों ने अपने–अपने कागज पर चित्र बनाए। इसके बाद मैंने कहा कि आप चाहें तो अपने बनाए चित्र को घर ले जा सकते हैं या आप चाहें तो इन्हें अपने यहां कक्षा की दीवार पर टांक कर सजा भी सकते हैं। कुछ बच्चों ने कहा कि इसे यहीं टांक देते हैं फिर बच्चों के चित्रों को मैंने दीवार पर चिपका दिया। अब मैंने कहा कि यह कैसे पता चलेगा कि कौनसा कागज किसका है? बच्चों ने अपने–अपने कागज की ओर इशारा करते हुए बताया कि उनका कौन सा कागज है।

अगले दिन बच्चों ने कागज पर फिर से चित्र बनाए तो मैंने कहा कि सब उस पर अपना–अपना नाम लिख देंगे जिससे सबको पता चल जाए कि कौन सा चित्रवाला कागज किसका है? अब बच्चों ने कहा कि दीदी हमको नाम लिखना नहीं आता। तो मैंने कहा कि आप सब चित्र बनाओ, फिर मैं बारी–बारी से तुम्हारे पास आ कर तुम्हारे कागज पर तुम्हारा नाम लिख दूंगी। मैंने ऐसा दो–तीन दिन किया। ये लगभग 5–6 वर्ष की आयु के बच्चे थे इसलिए इनके साथ मौखिक भाषा, गणित, खेल और चित्र बनाने जैसी गतिविधियों के साथ–साथ लिखने–पढ़ने पर भी काम करवाया जाना था। (हमने अपने प्रशिक्षण में कैसे पढ़ाना है यह नहीं सीखा था। यह सीखा था कि भाषा विकास के किन–किन तरीकों का इस्तेमाल कर हम भाषा सिखाने का काम कर सकते हैं। उसे समझते हुए और अपनी समझ का इस्तेमाल करते हुए) मैंने कहा कि तुम्हारा नाम मुझे हर दिन तुम्हारे कागज पर लिखना

पड़ता है इसलिए मैंने बोर्ड पर बच्चों के नाम बोल–बोलकर लिखे और फिर उन्हें अपना नाम बुलवाकर, उसे पहचानने का काम किया। इसके बाद अन्य साथियों के नाम भी बच्चों से पूछे। कुछ बच्चे अपना नाम ढूंढकर पढ़ पा रहे थे और कुछ नहीं। अब मैंने बच्चों के नाम एक चार्टशीट पर लिखकर दीवार पर लगा दिए और बच्चों से आगे से अपने–अपने नाम देखकर कागज पर, देखकर लिखने के लिए कहा। यहां बच्चे अपना ही नहीं अपने दोस्तों का नाम भी तेजी से पहचानने लगे। यहां बच्चे अपना नाम पहचानने के लिए कुछ–कुछ अनुमान लगाने लगे। किसी ने इसे यूं पकड़ा कि उसका नाम सबसे ऊपर या कुछ नीचे या सबसे नीचे लिखा है। किसी ने यूं पकड़ा कि उसका नाम लम्बा है जैसे कुलविंदर या छोटा है जैसे मोना। किसी ने यूं पकड़ा कि उसके नाम के पहले अक्षर की आकृति कुछ –कुछ (पहले अक्षर की आकृति का चित्र दिमाग में रखते हुए) ऐसी है। अब बच्चे अपना ही नहीं अपने साथियों का नाम भी दीवार पर लगे चार्ट में पहचान रहे थे और अपना नाम देख–देखकर कागज पर लिखने लगे।

जब बच्चे अपना नाम बिना देखे लिखने लगे तो उनमें से एक–दो बच्चों ने कहा कि दीदी, मेरे पापा का नाम भी लिख दो, मेरी मम्मी का नाम भी लिख दो। मैंने कहा कि ऐसा करो तुम्हारे घर में जो–जो रहते हैं उनके चित्र बनाओ, तुम्हारे घर में कौन–कौन रहता है? बच्चों ने अपने घर में रहने वाले सदस्यों के चित्र यूं बनाए–

पापा सबसे बड़े हैं तो पापा सबसे लम्बे बनाए फिर मम्मी उनसे छोटी दिखती हैं तो मम्मी उनसे छोटी बनाईं। तीन बहनें हैं तो तीन बहनें बनाईं, दो भाई हैं तो दो भाई बनाए। चित्र बनाते समय लगभग सभी बच्चों ने उनकी संख्या और लम्बाई का ध्यान रखा। अब उन्होंने अपने बनाए चित्र मुझे दिखाए। मैंने और उन्होंने उनके कागजों पर गिना कि उनके घर में कुल कितने लोग रहते हैं? और यह भी जाना कि उनके कितने भाई–बहन हैं? किसी के घर में दादी भी थीं। कौन किससे बड़ा है यह भी देखा. इसके बाद उन सबके नीचे उनके नाम लिखे। एक–दो बच्चों ने अपने पापा का नाम पापा और दादी का नाम दादी बताया. तब मैंने कहा कि तुम कल पता कर के आना उनका नाम। ऐसे में एक–दो बच्चों ने ही उन सहपाठी बच्चों के पापा का नाम बता दिया. बच्चों के इन कागजों पर चित्रों के नीचे मैंने उनके घर के सदस्यों के नाम लिख दिए। अब बच्चों से जब पढ़ने को कहा तो वे झट से उनके नाम पढ़ गए क्योंकि वे उनके घर के सदस्य थे और चित्र भी उन्होंने ही बनाए थे।

अब मैंने 2–3 दिन उनके हाथ में वही कागज देकर कुछ नामों को बोर्ड पर लिखा और फिर पूछा कि यह नाम किसके कागज पर लिखा है? बच्चों ने अपने कागज में लिखे नामों से बोर्ड पर लिखे नाम की आकृति को मिलान करने की कोशिश की। फिर ध्यान से देखने पर भी जब कोई बच्चा नहीं बोला तो मैंने कहा कि सब एक–दूसरे के कागज में ढूंढकर देखो। एक बच्चे ने बताया कि यह इसके कागज पर लिखा है। जिस बच्चे के कागज पर वह नाम लिखा है उससे पूछा कि यह किसके चित्र के नीचे लिखा है? या किसका नाम है? अच्छा तो यह विक्रम की मम्मी का नाम है गुरुबचनी। एक–दो दिन यह काम करवाने के बाद। दीवार के चार्ट पर लिखे नामों को देखते हुए बच्चों के नामों को अक्षरों में तोड़ते हुए बोर्ड पर लिखा जैसे अनिल को अ–नि–ल। अब बच्चे नाम को पढ़ने और उसे अक्षरों में तोड़ते हुए बोल रहे थे। जब नाम के अक्षर एक साथ लिखे थे तो मैं उन्हें एक साथ बोल रही थी और जब नाम के अक्षर अलग–अलग लिखे थे तो मैं अलग–अलग बोल रही थी। बच्चे मेरे साथ–साथ यह सब सुनते–देखते हुए बोल रहे थे।

कच्ची बस्ती शहरी क्षेत्र में थी इसलिए बच्चों को कहीं से यह भी पता था कि नामों को अंग्रेजी में भी लिखा जा सकता है। अपना नाम हिंदी में लिखना सीख लेने के बाद वे मुझसे कहने लगे "दीदी, मेरा नाम अंग्रेजी में लिख दो" मैंने लिख दिया। बच्चे अपना नाम अंग्रेजी में लिखवाकर बहुत खुश दिखाई दे रहे थे। उस कक्षा का वातावरण ऐसा बन गया था कि सीखने की इच्छा बच्चों की ओर से आती थी। इसके साथ–साथ मैं भाषा की मौखिक और लिखित अनेक गतिविधियां करवाती थी। मेरी समझ में बच्चों को पढ़ना–लिखना सिखाने का एक यही तरीका है, ऐसा नहीं था। इसलिए मैं कभी तो वर्ण से पढ़ाने लगती, कभी उनके नामों से, कभी कहानियों की पुस्तकों का प्रयोग करते हुए तो कभी पाठ्यपुस्तक से। उस समय मेरे मन में सही गलत का बहुत भय नहीं था। मेरी कक्षा में जब हम कहानियों/कविताओं की पुस्तक बीच में लेकर बैठते तो सारी पुस्तकों के नाम मैं उन्हें दिखाते हुए पढ़ती। बच्चे मेरे साथ–साथ पुस्तक का नाम बोलते। उस समय बच्चों को पढ़ना, आनंददायक लगता था। जल्दी ही बच्चे पुस्तक पर बने चित्र को देखकर पुस्तक का नाम बताने लगे। मैं कभी कहती कि इन कहानी की किताबों के नाम अपनी–अपनी कॉपी में लिखो, किताबों के नाम लिख लेने के बाद मैं इन किताबों के नाम

पढ़वाती। इस प्रकार बहुत सारी गतिविधियों को करते हुए बच्चों को जल्दी ही पढ़ना आ गया।

जब मैं श्रुतलेख करवाती तो शब्दों को बोल लेने के बाद उन सभी शब्दों को बोर्ड पर लिख देती। बच्चे स्वयं ही अपने शब्दों को मेरे द्वारा बोर्ड पर लिखे शब्दों से मिलान कर के ठीक करते। यहां सही गलत कहने वाली मैं नहीं थी. एक बार मैंने एक बच्चे की कॉपी में तीन प्रश्न लिखे वो कुछ इस तरह के थे–

1. विक्रम, तुम हरमिंदर को उसकी पेंसिल दे दोगे।
2. विक्रम, तुम बाहर देखकर आओ कि वहां बच्चे खेल रहे हैं क्या ?
3. विक्रम, आज तुम खाना खाकर आए हो क्या?

यहां मेरी अपेक्षा थी कि विक्रम इन प्रश्नों/सवालों के जवाब लिखेगा। लेकिन यह क्या, विक्रम ने तो थोड़ा फेरबदल कर के मेरे लिए तीन प्रश्न लिख दिए। यहां हम देख सकते हैं बच्चे ने समझा कि मुझे भी इसी तरह से प्रश्न लिखने हैं इसका मतलब वह लिखना तो जानता है (थोड़ी बहुत वर्तनी की अशुद्धियों के साथ) लेकिन अभी उत्तर लिखना नहीं जानता या मैं स्पष्ट नहीं कर पाई कि उसे उत्तर लिखना है। लेकिन प्रश्न बनाने के उसके कौशल की शुरुआत यहां देखी जा सकती है।

एक बार गणतंत्र दिवस पर जब हम अपने विद्यालय में आयोजन करने जा रहे थे तब मैंने कक्षा में बच्चों से कहा कि कल अपने को किस–किस चीज की जरूरत पड़ेगी? तो बच्चों ने चीजों के नाम सूची की जगह पंक्ति में लिखे क्योंकि वे अभी तक इसी फॉर्म में लिखते रहे थे। यहां बात हुई कि जब हम चीजों के नाम जल्दी–जल्दी देखते हैं तो उन्हें यूं पढ़ने में आसानी होती है। उनके द्वारा बताई चीजों की सूची/लिस्ट बोर्ड पर बनाते हुए मैंने लिखी जैसे–

1. फूल 2. लड्डू 3. झंडा 4. झंडा बांधने के लिए बांस।

यहां बच्चों ने चीजों के नामों को एक अलग तरीके से लिखते हुए देखा। इस प्रकार हमारे रोजमर्रा की गतिविधियों में से शैक्षणिक गतिविधियां निकलती थीं। जिनमें बच्चों का हर दिन नया–नया सीखना हो रहा था. हमारी कक्षा में पाठ्यपुस्तक एक आधार का काम कर रही थी। पाठ्यपुस्तक के पाठों की घटनाओं पर हम खूब काम करते। प्रश्नों के अलावा भी और कई सारे मौखिक प्रश्न बना–बना कर उन पर बात करते हुए उत्तर लिखते। काल्पनिक प्रश्नों पर बातचीत करने और उनके उत्तर लिखने में बच्चों को बहुत आनंद आता।

मेरे पढ़ना–लिखना सिखाने के तरीकों में मुझे, कुछ इस प्रकार की बातें नजर आती हैं–

1. मैंने अपने आपको पाठ्यपुस्तक से बहुत बांधा नहीं. उसकी अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए ऐसी रोचक गतिविधियों के द्वारा बच्चों को पढ़ने–लिखने का काम करवाया जिससे बच्चे जुड़े, उन्हें मजा आया।
2. कक्षा में पढ़ने–लिखने की सार्थक गतिविधियां की गईं जिनका बच्चे अर्थ समझते थे।
3. अधिकांश गतिविधियां उनके परिवेश से और दैनिक क्रियाकलापों से जुड़ी थीं।
4. मेरा सिखाने पर बहुत ज्यादा जोर नहीं था, बल्कि अनेक गतिविधियों के द्वारा बच्चों को भाषा सीखने के अवसर देना रहा।
5. बच्चों के पढ़ने और लिखने के दौरान की जाने वाली अशुद्धियों पर बहुत ज्यादा टोका नहीं।
6. सही पढ़ने पर ध्यान दिलवाने के लिए उसका साथ–साथ उच्चारण किया इसी प्रकार लेखन में बच्चों को स्वयं सही कैसे लिखते हैं यह जानने के लिए काम किया, जिससे बच्चे स्वयं अपनी गलतियों को पकड़ सकें।

इसके अलावा कक्षा में कुछ चीजें और काम कर रही थीं जैसे–

- मुझे यह विश्वास रहा कि सब बच्चे सीख सकते हैं। जब यह विश्वास था तो बच्चों के नहीं सीख पाने पर झुंझलाहट या गुस्सा नहीं आता था। उनके साथ मेरा एक सहयोगी रवैया रहता था।
- स्कूल, बस्ती के बीचोबीच था तो बच्चों को वह अनौपचारिक, अपना – सा लगता था।
- बच्चों और मेरे बीच दूरी नहीं थी। हम सभी एक बड़े फर्श/मोटी दरी पर घेरा बनाकर बैठते थे। कभी कोई बच्चा मेरे पास बैठा होता, कभी कोई।
- बच्चों के हर काम में मैं शामिल रहती थी. बच्चे लिख रहे हैं तो मैं उनका लिखा हुआ देख रही होती। मैंने कभी यह नहीं कहा कि तुम यह करो ! मेरी शब्दावली ही ऐसी बन गई थी कि "चलो, अपन खेल खेलते हैं या अपन कहानी सुनते हैं"।
- बच्चे स्कूल और कक्षा की हर गतिविधियों/ निर्णयों में भागीदार होते थे।
- कहीं–कहीं बेहतर प्रदर्शन कर उन्होंने मेरे पूर्वाग्रहों को तोड़ा।

(लेखिका अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन जयपुर, राजस्थान से जुड़ी हैं)